REG. NO. RAJHIN /2002/14707

उत्तमा वृत्तिस्तु कृषिकर्मैव

चोखी खेती

अक्टूबर, 2025

शुष्क प्रदेश में ईसबगोल की खेती

कोमल शेखावत[1], प्रो. सुजीत कुमार यादव[2], रुकू चावला[3]

इसबगोल का परिचय

इसबगोल, जिसे अंग्रेजी में Psyllium कहा जाता है, एक औषधीय पौधा है जिसका वानस्पतिक नाम Plantago ovata है। यह पौधा मुख्यतः भारत, विशेषकर गुजरात और राजस्थान में उगाया जाता है। इसके बीज और विशेष रूप से उसकी भूसी (हस्क) में घुलनशील फाइबर पाया जाता है, जो पाचन तंत्र के लिए अत्यंत लाभकारी होता है।

इसबगोल एक रबी फसल है, जो शीतकाल में उगाई जाती है।

इसका प्रयोग आयुर्वेद, यूनानी और एलोपैथिक चिकित्सा में होता है।

इसकी भूसी का उपयोग मुख्यतः कब्ज निवारण, पाचन सुधार, वजन घटाने, और कोलेस्ट्रॉल कम करने में किया जाता है।

उपयोगी भागः बीज का भूसी (फाइबर हेतु उपयोग)

इसबगोल की प्रमुख किस्में

गुजरात ईसबगोल–1

गुजरात कृषि विश्वविद्यालय द्वारा विकसित। औसतन उपज : 900–1100 किग्रा/हेक्टेयर। अच्छी भूसी गुणवत्ता और रोग प्रतिरोधी क्षमता।

गुजरात ईसबगोल–2

गुजरात ईसबगोल–1 से थोड़ी अधिक उपज देने वाली किस्म।
गर्म और शुष्क क्षेत्रों के लिए उपयुक्त।
रोगों के प्रति सहनशील।

निहारिका

सेंट्रल इंस्टीट्यूट ऑफ मेडिसिनल एंड एरोमैटिक प्लांट्स (CIMAP) द्वारा विकसित। बीजों में भूसी की मात्रा अधिक। औसतन उपजः 1000–1200 किग्रा/हेक्टेयर।

राजस्थान ईसबगोल–1

राजस्थान कृषि विश्वविद्यालय द्वारा विकसित। शुष्क क्षेत्रों में बेहतर प्रदर्शन। भूसी की गुणवत्ता अच्छी।

हिसार ईसबगोल–1

हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार द्वारा विकसित। उत्तरी भारत के लिए उपयुक्त किस्म। औसतन उपज : 800–1000 किग्रा/हेक्टेयर।

जवाहर ईसबगोल–4

जेएनकेवीवी, जबलपुर (मध्य प्रदेश) द्वारा विकसित। बड़ी भूसी, अच्छे फाइबर कंटेंट के लिए प्रसिद्ध।

किस्म चयन करते समय ध्यान दें:

स्थान की जलवायु और मिट्टी के अनुसार किस्म चुनें। बीज प्रमाणित स्रोत से ही लें।

किस्म की भूसी प्रतिशत, बीज आकार , और रोग प्रतिरोध को जांचें।

जलवायु आवश्यकताएँ

ठंडी और शुष्क जलवायु उपयुक्त होती है। आदर्श तापमान : 15°C से 30°C ओस, पाला और अत्यधिक वर्षा से फसल को नुकसान।

1. सहायक प्रोफेसर (अतिथि संकाय), आनुवंशिकी एवं पादप प्रजनन विभाग, 2. विभागाध्यक्ष, आनुवंशिकी एवं पादप प्रजनन विभाग, 3. सहायक प्रोफेसर (अतिथि संकाय), आनुवंशिकी एवं पादप प्रजनन विभाग, स्वामी केशवानंद राजस्थान कृषि विश्वविद्यालय बीकानेर

मृदा (भूमि) आवश्यकताएँ

बलुई दोमट मिट्टी सर्वोत्तम होती है। पीएच मान : 6.5 से 7.5, जलभराव वाली या चिकनी मिट्टी से बचें।

भूमि की तैयारी

खेत की 2–3 बार जुताई करें। गोबर की सड़ी खादरू 10–15 टन प्रति हेक्टेयर डालें।

बेहतर जल निकासी हेतु उठे हुए बेड या मेढ़ बनाएं।

बुआई का समय

अक्टूबर से नवंबरके बीच (रबी सीजन), देर से बुआई करने पर उत्पादन घटता है।

बीज दर और बुआई विधि

बीज दरः 6–8 किग्रा/हेक्टेयर, पंक्ति दूरीः पंक्ति से पंक्ति 30 सेमी, पौधे से पौधा 10 सेमी

विधिः छिटकवां या कतारों में बुआई (कतार विधि बेहतर)

सिंचाई

बुआई के तुरंत बाद हल्की सिंचाई करें। इसके बाद हर 12–15 दिन पर सिंचाई करें। अत्यधिक सिंचाई से बचें। फंगल रोग हो सकते हैं।

खाद एवं उर्वरक

बेसल डोज : 20 किग्रा नाइट्रोजन. 20 किग्रा फास्फोरस प्रति हेक्टेयर

टॉप ड्रेसिंग : 30 दिन बाद 20 किग्रा नाइट्रोजन और दें

निराई–गुड़ाई एवं रोग नियंत्रण

शुरुआती 40–50 दिन तक निराई आवश्यक, हाथ से या खुरपी से निराई करें।

कीटः एफिड्स, व्हाइटफ्लाई (नीम अर्क या सुरक्षित कीटनाशक से नियंत्रण)

रोगः डाउनी मिल्ड्यू, पाउडरी मिल्ड्यू (मैन्कोजेब जैसे फफूंदनाशक से रोकथाम)

कटाई (हार्वेस्टिंग)

110–130 दिन में फसल तैयार होती है। पत्तियाँ पीली होकर गिरने लगती हैं। बीज भूरे हो जाते हैं।सुबह जल्दी कटाई करें ताकि बीज झड़ें नहीं। पौधों को काटकर सुखाएं, फिर बीज निकालें और साफ करें।

उपज

औसतन :

बीज : 800–1200 किग्रा/हेक्टेयर,

भूसीः 250–300 किग्रा/हेक्टर

इसबगोल के उपयोग

पाचन तंत्र में सुधार

इसबगोल की भूसी में मौजूद घुलनशील फाइबर कब्ज (constipation) को दूर करता है। यह आंतों की गतिविधि को नियंत्रित कर डायरिया (दस्त) और इर्रिटेबल बाउल सिंड्रोम (IBS) में भी राहत देता है।

वजन कम करने में सहायक

इसबगोल पेट में जाकर पानी सोखकर फूल जाता है , जिससे भूख कम लगती है। यह शरीर को अधिक समय तक तृप्त रखता है , जिससे ओवरईटिंग (अधिक भोजन)से बचा जा सकता है।

कोलेस्ट्रॉल नियंत्रण

यह शरीर में खराब कोलेस्ट्रॉल (LDL) को कम करने में सहायक है। इससे हृदय रोगों का खतरा कम होता है।

मधुमेह (डायबिटीज) में उपयोगी

इसबगोल खाने से भोजन का पाचन धीमा होता है , जिससे ब्लड शुगर लेवल धीरे–धीरे बढ़ता है।

यह टाइप–2 डायबिटीज वाले रोगियों के लिए उपयोगी हो सकता है।

मल प्रणाली को साफ करता है

इसबगोल की भूसी मल को मुलायम बनाती है, जिससे बवासीर (piles) और एनल फिशर जैसी समस्याओं में राहत मिलती है। डिटॉक्स (शरीर की सफाई) में सहायक। यह शरीर से विषैले तत्वों को बाहर निकालने में मदद करता है।

अन्य उपयोग

औषधीय उद्योग में सिरप, टैबलेट, कैप्सूल आदि में प्रयोग। खाद्य उद्योग में आइसक्रीम, बेकरी उत्पादों आदि में फाइबर सप्लीमेंट के रूप में प्रयोग। पशु आहार में भी सीमित मात्रा में उपयोग होता है।

इसबगोल की खेती में आने वाली समस्याएँ

प्रतिकूल मौसम

फसल को पाला (frost) और अत्यधिक वर्षा से नुकसान होता है। फूल और बीज बनने के समय अगर बारिश हो जाए तो बीज झड़ सकते हैं। अत्यधिक आर्द्रता से फफूंदजन्य रोग तेजी से फैलते हैं।

कीट और रोग

आम कीट : एफिड्स (चीपके) और सफेद मक्खी (whitefly), जो पत्तियों का रस चूसते हैं।

रोग : पाउडरी मिल्ड्यू (Powdery mildew) – सफेद चूर्ण जैसी परत

पत्तों पर।

डाउनी मिल्ड्यू – पत्तों के नीचे पीला–स्लेटी धब्बे।

इनसे पौधों की वृद्धि रुक जाती है और बीज की गुणवत्ता खराब होती है।

खरपतवार नियंत्रण की कठिनाई

- शुरुआती 30–40 दिन तक खरपतवार तेजी से बढ़ते हैं।
- यदि समय पर निराई–गुड़ाई न की जाए तो फसल का दम घुट जाता है।

जल प्रबंधन समस्याएँ

- अधिक सिंचाई से जड़ सड़न और फफूंद रोग।
- कम सिंचाई से बीजों का विकास अवरुद्ध हो जाता है।
- उचित सिंचाई समय और मात्रा का पालन करना चुनौतीपूर्ण होता है।

बीज झड़ना

- कटाई में देर करने पर बीज झड़ जाते हैं और उपज कम हो जाती है।
- हवा चलने पर भी पकने के बाद बीज बिखर सकते हैं।

गुणवत्ता और प्रसंस्करण समस्याएँ

- अगर सुखाने और संग्रहण में लापरवाही हो तो बीज में नमी बढ़ जाती है , जिससे कीट लग सकते हैं।
- सही ढंग से मड़ाई व भूसी अलग न करने पर गुणवत्ता घट जाती है।
- बाजार और मूल्य समस्या
- किसानों को कभी–कभी न्यूनतम समर्थन मूल्य नहीं मिलता।
- बिचौलियों के कारण वास्तविक लाभ किसानों तक नहीं पहुँचता।

समाधान के उपाय:

- रोगों और कीटों की समय पर पहचान और नियंत्रण।
- संतुलित उर्वरक और जल प्रबंधन।
- कटाई सही समय पर करना।
- सरकार द्वारा प्रशिक्षण और समर्थन योजनाओं का लाभ लेना।

पत्रिका में प्रकाशित आलेख/ विचार लेखकों के अपने हैं।

मेथी की उन्नत खेती : ध्यान रखने योग्य बातें

विनीता राजपूत[1], सुनिल कमार[1], नरेन्द्र कुमार[1], रिषिता[2], ओम प्रकाश कम्बोज[3]

हरे पत्ते और बीज मसाले वाली सब्जियों में मेथी का एक महत्वपूर्ण स्थान है। मेथी एक बहुउपयोगी पौधा है जो न सिर्फ स्वाद और सुगंध बढ़ाता है बल्कि स्वास्थ्य लाभ भी प्रदान करता है। मेथी एक ठंडे मौसम की फसल है जो सब्जी, मसाले और औषधीय उपयोग के लिए उगाई जाती है। इसे भारत में लगभग हर राज्य में उगाया जाता है, खासकर राजस्थान, उत्तर प्रदेश, गुजरात, पंजाब और मध्य प्रदेश में। भारत में देसी मेथी और कसूरी मेथी दोनों को रबी के मौसम के दौरान ताजे हरे पत्ते, बीज व सूखे पत्तों के लिए उगाया जाता है। इसके पत्तों को सुखा कर सीजन खत्म होने के बाद कई व्यंजनों में प्रयोग किया जाता है। आज कल मेथी को जीवित मल्च के रूप में भी प्रयोग में लाया जाता है। इसको पशुओं के चारे व हरी खाद के लिए भी उगाया जा सकता है। इसको कई प्रकार के व्यंजनों व मेडिसन के रूप में प्रयोग में लाया जाता है। आइए जानते है कि मेथी की उन्नत खेती के लिए किन–किन बातों का ध्यान रखना आवश्यक है–

उन्नत किस्मेः

1. पूसा अर्ली बंचिंग– अधिक पैदावार देने वाली देसी मेथी की किस्म है। इसके पौधे तेजी से सीधे बढते है। पौधों पर पत्तियों की बगल से सफेद फूल निकलते है। फलियां हरी, लम्बी और चपटी होती है। दानों का आकार बडा होता है। इस किस्म की पत्तियों और दानों की उपज इसकी कटाईयों पर निर्भर करती है।

2. हिसार सोनाली– यह देसी मेथी की किस्म है इस किस्म को हिसार मेथी–57 के नाम से भी जाना जाता है जो कि चौधरी चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार द्वारा अनुमोनित की गई है। इस किस्म के पौधे सीधे और शीघ्र बढ़वार लेतें हैं। पौधों में अधिक फलियां आती है और वह दानों से भरी हुई होती है। बीजों का आकार बड़ा होता है। यह किस्म लगभग 8–10 क्विंटल प्रति एकड दानों की उपज देती है।

3. हिसार मुक्ता– इस किस्म को एच.एम.–346 भी कहा जाता है। यह किस्म हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार द्वारा अनुमोनित की गई देसी मेथी की किस्म है। इस किस्म के पौधे सीधे ओर तेजी से बढते है। इसके दानें हल्के हरे–पीले रंग के होते है जिनका आकार बडा होता है। यह किस्म डाऊनी मिल्ड्यू रोग की प्रतिरोधक है। इसके दानों की पैदावार 8–10 क्विंटल प्रति एकड़ है।

4. कसूरी मेथी– यह कसूरी मेथी की किस्म है। इस किस्म की झाडीनुमा गुछ्छेदार बढवार है। इसके पत्ते तीन फांको वाले, फूल पीले और डालियों की शिखाओं पर घने लगते है। पौधों पर फलियां घासीया, चपटी, छोटी और हरें रंग की होती है। इस किस्म से कई कटाईयां ली जा सकती है।

5. कसूरी सुप्रीम : यह किस्म लता (ट्रेलिंग) प्रकार की होती है और अत्यधिक टिलर्स (सहायक शाखाएं) उत्पन्न करती है। इसका तना कोमल होता है तथा पत्तियाँ चौड़ी और हल्के हरे रंग की होती हैं। इसमें फूल बनने की प्रक्रिया (बोल्टिंग) देर से होती है, जिसके कारण हरी पत्तियों की तीन कटाई संभव होती है। पहली कटाई बुवाई के लगभग 42 दिन बाद की जा सकती है। औसत पौधे की ऊँचाई लगभग 27 से.मी. होती है। इसकी औसत हरी पत्तियों की उपज लगभग 100 क्विंटल प्रति एकड़ होती है।

बिजाई का समय व बीज की मात्राः

मेथी को उसके हरे पत्ते और बीज दोनों के लिए उगाया जाता है। जहां पत्ते सब्जी और मसाले के तौर पर काम आते हैं, वहीं दाने भोजन में तड़का लगाने और दवाइयाँ बनाने में प्रयोग होते है। हरी पत्तियों के लिए बिजाई मध्य सितम्बर से नवम्बर और दानों की फसल के लिए बिजाई अक्टूबर के प्रथम सप्ताह में की जाती

1. कृषि विज्ञान केन्द्र, सिरसा, 2. मौलिक विज्ञान एवं मानविकी महाविद्यालय, 3. कृषि विज्ञान केन्द्र, फतेहाबाद
चौधरी चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

है। देसी मेथी के लिए 8–10 किलोग्राम बीज प्रति एकड़ प्रयाप्त है, जबकि कसूरी मेथी के लिए 5 किलोग्राम प्रति एकड़ बीज की आवश्यकता होती है। फफूंदनाशक थिरम / 2.5 ग्रा. प्रति किलो बीज की दर से बीज उपचार करने से बीमारियाँ काम लगती हैं। देसी और कसूरी मेथी दोनों की बिजाई लाईनों में उचित नमी में करनी चाहिए। बिजाई के समय लाईन से लाईन की दूरी 20–30 से.मी. और पौधों से पौधे के बीच की दूरी 10 से.मी. रखनी चाहिए।

खाद व उर्वरक:

मेथी की फसल उगाने के लिए लगभग 8–10 टन गोबर की खाद, 55 कि.ग्रा. यूरिया और 125 कि. ग्रा. सिंगल सुपर फास्फेट प्रति एकड़ की आवश्यकता होती है। खेत तैयार करते समय गोबर की खाद, पूरी फास्फोरस और एक तिहाई नाईट्रोजन बिजाई डालें और बिजाई करें। बाकी बची हुई नाईट्रोजन दो बार समान मात्रा में खड़ी फसल पहली और दूसरी कटाई के बाद डालें।

खरपतवार नियन्त्रण:

फसल और खरपतवारों के जमाव से पहले खरपतवारनाशक दवा पेन्डीमैथालीन 400 ग्राम प्रति एकड़ (स्टोम्प 30 प्रतिशत, 1.3 लीटर) के हिसाब से 250 लीटर पानी में मिलाकर छिड़काव करें।

खरपतवारनाशक दवा डालते समय खेत में उचित नमी का होना अति आवश्यक है और छिड़काव करते समय उल्टा चलें। यदि लेबर की उपलब्धता हो तो मेथी के खेत में 2–3 बार निराई–गुडाई करके भी खरपतवार रोकथाम के साथ साथ अच्छी पैदावार की जा सकती है।

उपज :

हरे पत्तों और दानों की उपज किस्म, कटाई की संख्या और खेत के प्रबंधन पर पर निर्भर करती है। पौधे की ऊंचाई 25 से.मी. तक होने पर पहली कटाई करनी चाहिए। हरे पत्तों की लगभग तीन कटाई ली जा सकती हैं। हरी पत्तियों के लिए उगाई जाने वाली देसी मेथी की किस्मों की उपज 28–32 क्विंटल प्रति एकड़ तक हो सकती है। यदि कसूरी मेथी की बात करें तो इसकी पैदावार 20–25 क्विंटल प्रति एकड़ होती है।

मेथी की फली मध्य अप्रैल तक पक कर तैयार हो जाती है। जब फली भूरी होने लगे और पत्ते सूखने लगें, तो पौधे को उखाड़ लेना चाहिए और पक्के फर्श पर पीटकर दानों को अलग कर लेना चाहिए। दानों के लिए उगाई जाने वाली फसल में देसी मेथी से 6–8 क्विंटल दाना प्रति एकड़ और कसूरी मेथी से 2.5–3 क्विंटल दाना प्रति एकड़ उपज होती है।

हानिकारक कीट और रोकथाम:

1. **बगला चेपा** (Aphid): काले रंग के इस कीट के शिशु व प्रौढ दोनों ही फसल के लिए हानिकारक हैं। ये दोनों पौधों से रस चूस कर नुक्सान करते है। इस कीट की रोकथाम के लिए 300 मि.ली. मैलाथियान 50 ई. सी. को 200 लीटर पानी में घोलकर खेत में छिडकाव करना चाहिए और साथ ही कीट ग्रसित टहनियों को तोड़ कर नष्ट कर देना चाहिए। छिड़काव के तुरन्त बाद मेथी की कटाई ना करें। अगर संभव हो तो कटाई के बाद ही छिड़काव करें।

सुपर कम्पोस्ट कैसे बनाये

कैलाश रानी[1] एवं डॉ. उपेंद्र कुमार[3]

फसलों एवं पौधों को आवश्यक पोषक तत्वों की आपूर्ति के लिए जो कार्बनिक पदार्थ भूमि में मिलाकर मिट्टी की उर्वरा शक्ति बढ़ाने में सहायक होते हैं उन्हें ही खाद कहते हैं। अधिकांश प्राकृतिक पदार्थों से ही विभिन्न फसलों अथवा पेड़–पौधों का मलबा सडड़ा गला कर तैयार खाद के रूप में प्रयोग किया जाता है। ऐसे कार्बनिक पदार्थों में गोबर की खाद, सुपर कम्पोस्ट, वर्मी कम्पोस्ट, हरी खाद, नीम की खली, भूसी की खाद, दुर्गंध की खाद इत्यादि। फसलों के अवशेष, हड्डी–कचरे, पशुओं का गोबर एवं मूत्र इत्यादि को जीवाणु तथा कवक (फफूंद) द्वारा क्रियात्मक परिस्थितियों में सड़ाने से जो पदार्थ बनते हैं उन्हें कम्पोस्ट खाद कहते हैं।

सुपर कम्पोस्ट

कम्पोस्ट बनाते समय यदि गड्ढे में सिंगल सुपर फॉस्फेट (एस. एस.पी.) या जिप्सम या रॉक फॉस्फेट का उपयोग किया जाता है तो इस विधि से बनी खाद को सुपर कम्पोस्ट कहते हैं। इसमें सामान्य कम्पोस्ट की तुलना में फॉस्फोरस, पोटाश (सल्फर) एवं अन्य पोषक तत्व अधिक मात्रा में पाए जाते हैं।

सुपर कम्पोस्ट बनाने हेतु स्थान का चुनाव

सुपर कम्पोस्ट बनाने हेतु ऐसे स्थान का चुनाव चाहिए जहाँ वर्षा का पानी नहीं भरता हो। किसानों को एक बात का विशेष ध्यान रखना चाहिए कि गड्ढा खोदने हेतु ऐसे स्थान का चुनाव करें जो पशुओं के बाड़े के स्थान के नजदीक हो।

सुपर कम्पोस्ट बनाने हेतु गड्ढा खोदना

सुपर कम्पोस्ट बनाने हेतु गड्ढा 180 वर्ग फुट के आकार का बनायें। इसके लिए 12 फुट लम्बा, 5 फुट चौड़ा एवं 3 फुट गहरा गड्ढा खोदना चाहिए। गड्ढे की लम्बाई और चौड़ाई किसान अपनी सुविधानुसार कम या ज्यादा कर सकते हैं। लेकिन गड्ढे की गहराई किसी भी हालत में तीन फुट से अधिक नहीं होनी चाहिए। यदि गड्ढे की गहराई अधिक कर ली जाती है तो कम्पोस्ट बनने में बाधा उत्पन्न होती है और सुपर कम्पोस्ट सही प्रकार से नहीं सड़ पाती है।

सुपर कम्पोस्ट बनाने हेतु आवश्यक सामग्री

1. नीम की पत्तियाँ
2. फसलों के अवशेष एवं खरपतवार
3. पशुओं का गोबर एवं मूत्र
4. पशुओं के चारे एवं बिछावन के अवशेष
5. सिंगल सुपर फॉस्फेट या जिप्सम या रॉक फॉस्फेट
6. राख
7. पानी

सुपर कम्पोस्ट हेतु गड्ढा भरने की विधि

गड्ढे में सबसे नीचे मोटा कचरा (10–15 सेंटीमीटर), उसके ऊपर बारिक कचरा (5–10 सेंटीमीटर) एवं गोबर, मूत्र, राख, नीम की पत्तियाँ, खेत के अवशेष, खरपतवार आदि की परत बिछाकर डाल कर एक फुट तक भर दें। गड्ढे में नमी बनाये रखने हेतु प्रत्येक परत के बाद आवश्यक मात्रा में पानी का छिड़काव करें। पानी छिड़कने के बाद गड्ढा 50 किलोग्राम एस.एस.पी. (सिंगल सुपर फॉस्फेट) या 100 किलोग्राम जिप्सम या 200 किलोग्राम रॉक फॉस्फेट प्रति गड्ढे के हिसाब से उपरोक्त विधि अनुसार डाल कर भरें। गड्ढे को भरने के पश्चात् लगभग डेढ़ से पौने दो फुट तक कचरा ऊपर उठ जाने पर लगभग 6 इंच मोटी मिट्टी की परत लगा दें। कभी–कभी यदि वर्षा के कारण गड्ढे में पानी भर जाये तो उसका निस्सारण कर देना चाहिए। यदि वर्षा का पानी बार–बार गड्ढे में

सहायक प्राध्यापक स्वामी केशवानन्द जी वी महाविद्यालय संगरिया
एवं सहायक प्राध्यापक कृषि महाविद्यालय हनुमानगढ़

भरने की संभावना रहती है तो गड्ढे के ऊपर मिट्टी डालकर टीला बना दें। यदि समय पर वर्षा नहीं हो रही हो तो प्रत्येक पखवाड़े में गड्ढे को पानी से सिंचित करते रहें। यदि खाद सूखने लगे तो उस पर गोबर का घोल छिड़ककर नमी बनाये रखें। इस प्रकार 3.5 से 4 माह में सुपर कम्पोस्ट खाद बनकर तैयार हो जाती है।

सुपर कम्पोस्ट तैयार हुआ या नहीं की जाँच

कम्पोस्ट खाद तीन माह बाद किसान भाई 6 फुट लम्बी सींक की लकड़ी लेकर गड्ढे पर चढ़कर उसमें डालें, यदि लकड़ी आसानी से गड्ढे में घुस जाती है तो यह इस बात का संकेत है कि कम्पोस्ट खाद तैयार हो गई है। और यदि लकड़ी आसानी से अन्दर नहीं घुसती है तो इसका मतलब है कि अभी सुपर कम्पोस्ट ठीक प्रकार से सड़कर तैयार नहीं हुआ है।

सुपर कम्पोस्ट की संरचना

सूक्ष्मजीव : इस प्रकार की सुपर कम्पोस्ट में ट्राइकोडर्मा, स्यूडोमोनास और माइकोराइजा जैसे लाभदायक सूक्ष्मजीवों के साथ–साथ फॉस्फेट घुलनशील बैक्टीरिया और एनपीके कंसोर्टिया भी प्रचुर मात्रा में होते हैं, जो मृदा स्वास्थ्य और पौधों की वृद्धि के लिए महत्वपूर्ण हैं।

पोषक तत्व : यह कार्बन, नाइट्रोजन, फास्फोरस और पोटेशियम (एनपीके) जैसे आवश्यक मैक्रोन्यूट्रिएंट्स के साथ–साथ तांबा, जस्ता, लौह, मैंगनीज, कैल्शियम, मैग्नीशियम और अन्य ट्रेस तत्व जैसे सूक्ष्म पोषक तत्व प्रदान करता है।

कार्बनिक पदार्थ : कृमि मल, कम्पोस्ट खाद और अल्फाल्फा भोजन जैसी सामग्रियां उच्च कार्बनिक पदार्थ सामग्री में योगदान करती हैं, जो मिट्टी की संरचना और जल धारण क्षमता में सुधार करती हैं।

पौधों की वृद्धि बढ़ाने वाले तत्व :

फुल्विक एसिड, ह्युमिक एसिड, जिबरेलिक एसिड, एंजाइम और अन्य यौगिक पौधों की वृद्धि और जीवन शक्ति को बढ़ाते हैं।

यह नियमित खाद से कैसे भिन्न है

उन्नत पोषण : सुपर कम्पोस्ट, मानक कम्पोस्ट की तुलना में अधिक व्यापक और संतुलित पोषक तत्व प्रोफाइल प्रदान करता है।

सूक्ष्मजीवी गतिविधि : विशिष्ट लाभकारी सूक्ष्मजीवों को जानबूझकर मिलाने से खाद की मिट्टी की उर्वरता और पौधों के स्वास्थ्य में सुधार करने की क्षमता बढ़ जाती है।

बेहतर पौध वृद्धि : उच्च गुणवत्ता वाले कार्बनिक पदार्थ, लाभकारी सूक्ष्मजीवों और वृद्धि को बढ़ावा देने वाले पदार्थों के संयोजन के परिणामस्वरूप अधिक जीवंत पौधे और बेहतर जड़ प्रणाली प्राप्त होती है।

सुपर कम्पोस्ट का उपयोग एवं फायदे

1. इसे बुवाई के 7–10 दिन पूर्व ही खेत में डालकर तुरंत जुताई करना फायदे मंद रहता है। इसकी मात्रा फसलों के प्रकार एवं मिट्टी जाँच के आधार पर 10–15 टन प्रति हेक्टेयर की दर से प्रयोग करें।

2. सुपर कम्पोस्ट के उपयोग से अन्य खादों के मुकाबले अधिक मात्रा में फॉस्फोरस एवं गंधक (सल्फर) पोषक तत्व के रूप में उपलब्ध होता है।

3. इसके प्रयोग से दीमक एवं अन्य हानिकारक कीटों का प्रकोप भी कम हो जाता है।

4. फसलों में खरपतवार भी कम उगते हैं।

5. सुपर कम्पोस्ट के साथ पी.एस.बी. (जीवाणु खाद) के उपयोग से फसलों में फॉस्फोरस की उपलब्धता बढ़ जाती है एवं लम्बे समय तक उपलब्ध रहती है।

6. मिट्टी की जल धारण क्षमता बढ़ती है, जिसके परिणाम स्वरूप फसलों को कम सिंचाई की आवश्यकता पड़ती है।

7. सुपर कम्पोस्ट के प्रयोग से फसलों में मृदा जनित एवं अन्य फफूंदों से फैलने वाली बीमारियाँ भी कम लगती हैं।

8. इसके प्रयोग से मृदा के भौतिक, रासायनिक एवं जैविक गुण धर्मों में वांछित सुधार होता है, जिससे मृदा स्वास्थ्य भी अच्छा रहता है।

9. महंगे रासायनिक उर्वरकों की निर्भरता में भी कमी आती है।

10. सुपर कम्पोस्ट के उपयोग द्वारा ली गई पैदावार का उपभोग करने पर स्वास्थ्य पर भी कोई प्रतिकूल प्रभाव नहीं पड़ता है।

देशी नस्लों के लिए परम्परागत और संतुलित आहार

मामराज गुर्जर, सुनिल कुमार मीना, अशोक कुमार

भूमिका :

भारत में पशुपालन एक परंपरागत व्यवसाय है, जो ग्रामीण अर्थव्यवस्था की रीढ़ है। विशेषकर देसी नस्लों की गायें और भैंसें अपनी सहनशीलता, कम लागत में पालन और औषधीय गुणों वाले दूध के कारण प्रसिद्ध हैं। लेकिन इनकी दुग्ध उत्पादन क्षमता को बनाए रखने और स्वास्थ्य सुधारने के लिए एक संतुलित आहार अत्यंत आवश्यक है। भारत में पाई जाने वाली देसी नस्लें (गाय, भैंस, बकरी आदि) न केवल ग्रामीण आजीविका का प्रमुख आधार हैं, बल्कि इनका दूध, गोबर, मूत्र और श्रम शक्ति गाँवों की अर्थव्यवस्था और जैविक कृषि के लिए अत्यंत उपयोगी है। देसी नस्लें कम संसाधनों में भी जीवित रहती हैं और इनकी रोग प्रतिरोधक क्षमता विदेशी नस्लों की तुलना में अधिक होती है। किंतु, इनकी उत्पादकता (विशेषकर दूध उत्पादन) को बनाए रखने और बढ़ाने के लिए परंपरागत एवं संतुलित आहार की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण है।

देसी नस्लों की विशेषताएँ :

- कम खर्च में पालन योग्य
- स्थानीय वातावरण के अनुकूल
- रोग प्रतिरोधक क्षमता अधिक
- दूध में औषधीय गुण जैसे A2 प्रोटीन की उपस्थिति

इन्हीं गुणों के कारण इन पशुओं को विशेष देखभाल की जरूरत होती है, ताकि इनकी दूध देने की क्षमता और जीवनकाल दोनों बढ़ें।

संतुलित आहार क्या है ?

संतुलित आहार (Balanced Ration) वह आहार है जिसमें पशु की आवश्यकताओं के अनुसार ऊर्जा, प्रोटीन, खनिज, विटामिन, रेशा और पानी उचित अनुपात में मौजूद हों, ताकि पशु स्वस्थ रहे, उसकी उत्पादकता (दूध, मांस, श्रम) बनी रहे और प्रजनन क्षमता प्रभावित न हो।

संतुलित आहार वह है जिसमें निम्नलिखित पोषक तत्व उचित मात्रा में हों:

- कार्बोहाइड्रेट (ऊर्जा के लिए)
- प्रोटीन (उत्पादन और वृद्धि के लिए)
- वसा (ऊर्जा और पाचन में सहायक)
- विटामिन्स और खनिज (शरीर की कार्य प्रणाली के लिए आवश्यक)
- रेशा (फाइबर) (पाचन के लिए जरूरी)
- पानी (पोषण पहुँचाने और शरीर में संतुलन के लिए)

परंपरागत आहार प्रणाली :

भारत में पालतू पशुओं के पालन–पोषण की नींव परंपरागत आहार प्रणाली पर टिकी रही है। यह प्रणाली ग्रामीण परिवेश और स्थानीय संसाधनों पर आधारित है। किसानों ने सदियों के अनुभव से यह तय किया कि कौन–सा चारा, दाना और घरेलू उप–उत्पाद किस मौसम और परिस्थिति में पशुओं के लिए उपयुक्त है। जैसे:

- हरा चारा: नेपियर घास, ज्वार, बाजरा, बरसीम, सुबबूल
- सूखा चारा: भूसा (गेहूं या धान का), सूखा घास
- अनाज के अवशेष: दलिया, टूटे चावल, गेहूं का चोकर
- पशु खली: सरसों, मूंगफली, तिल या सोयाबीन खली
- घरेलू चीजें: गुड़, नमक, मिट्टी/खर/भूसी
- मिनरल मिक्सचर (परंपरागत रूप से लकड़ी की राख या नमक)

यह परंपरागत ज्ञान अक्सर अनुभव पर

एस.के.एन.कृषि महाविद्यालय जोबनेर, जयपुर

आधारित होता है, लेकिन इसमें वैज्ञानिक संतुलन की कमी हो सकती है।

देसी नस्लों के लिए संतुलित आहार का आधुनिक दृष्टिकोण:

भारत की देसी नस्लें (गाय, भैंस, बकरी आदि) ग्रामीण अर्थव्यवस्था और आजीविका का महत्वपूर्ण हिस्सा हैं। इनकी विशेषता है कि ये स्थानीय जलवायु में आसानी से ढल जाती हैं और रोग प्रतिरोधक क्षमता भी अधिक होती है। लेकिन आधुनिक समय में इनकी उत्पादकता (विशेषकर दूध उत्पादन) को बनाए रखने के लिए केवल परंपरागत आहार प्रणाली पर्याप्त नहीं है। इसके लिए संतुलित आहार का आधुनिक दृष्टिकोण (Modern Approach) अपनाना अनिवार्य है।

1. हरे चारे का महत्व (60–70:) दिन में कम से कम 20–25 किलोग्राम हरा चारा देना चाहिए। हरा चारा न केवल ऊर्जा देता है, बल्कि विटामिन और फाइबर का स्रोत भी होता है।

2. सूखा चारा (20–30:) भूसा, सूखी घास आदि। इसे पानी में भिगोकर दें ताकि पाचन में आसानी हो। भूसे के साथ खली या चोकर मिलाना फायदेमंद होता है।

3. अनुपूरक आहार (सप्लिमेंट्स) 1 लीटर दूध उत्पादन पर 400–500 ग्राम दाना मिश्रण (Cattle Feed) देना चाहिए। दाना में खली, चोकर, मक्का, गुड़, मिनरल मिक्सचर आदि का समावेश होना चाहिए।

4. नमक और मिनरल मिक्सचर : मिनरल लिक या पाउडर हर रोज 50–60 ग्राम। यह दूध की गुणवत्ता बढ़ाने में सहायक है।

5. पानी : प्रतिदिन 40–60 लीटर ताजे और स्वच्छ पानी की आवश्यकता होती है।पानी की कमी दूध उत्पादन को तत्काल प्रभावित करती है।

परंपरागत और वैज्ञानिक का संयोजन क्यों जरूरी है ?

परंपरागत आहार स्थानीय और किफायती होता है, परंतु उसमें सभी पोषक तत्वों की पूर्ति नहीं होती। आधुनिक पोषण विज्ञान यह बताता है कि पशु के शरीर में किस चीज की कितनी जरूरत है। दोनों का संयोजन करने से कम लागत में अधिक उत्पादन संभव है।

उदाहरण**:** देसी गाय के लिए एक दिन का आदर्श आहार (10 लीटर दूध देने वाली)

पोषण और संतुलित आहार मिले। केवल परंपरागत चारा खिलाना पर्याप्त नहीं है, क्योंकि उसमें कई बार आवश्यक पोषक तत्वों की कमी रह जाती है। वहीं, केवल आधुनिक पूरक आहार पर निर्भर रहना भी महँगा और अस्थायी समाधान है। इसलिए सबसे बेहतर तरीका यह है कि परंपरागत चारे जैसे हरा चारा, सूखा भूसा, दाना आदि को वैज्ञानिक रूप से तैयार किए गए मिनरल मिक्सचर और प्रोटीन स्रोतों के साथ संतुलित मात्रा में दिया जाए। इससे पशुओं को ऊर्जा, प्रोटीन, खनिज और विटामिन सब उचित अनुपात में मिलते हैं। परिणामस्वरूप पशु न केवल स्वस्थ रहते हैं, बल्कि उनकी दूध देने की क्षमता, प्रजनन क्षमता और उम्र भी बढ़ती है। इसका सीधा लाभ पशुपालक को आय वृद्धि के रूप में मिलता है और देश की कुल दुग्ध उत्पादन क्षमता में भी उल्लेखनीय सुधार होता है। इस प्रकार पोषणयुक्त

प्रकार	सामग्री	मात्रा
हरा चारा	नेपियर/बरसीम	25–30 किग्रा
सूखा चारा	गेहूं भूसा	5–6 किग्रा
दाना मिश्रण	खली, चोकर, मक्का, गुड़	4–5 किग्रा
मिनरल मिक्सचर	तैयार सप्लिमेंट	50–60 ग्राम
नमक	साधारण नमक	30–40 ग्राम
पानी	स्वच्छ जल	50–60 लीटर

निष्कर्ष:

देसी नस्लों की असली शक्ति तभी सामने आती है जब उन्हें उचित और संतुलित आहार ही देसी नस्लों की असली क्षमता को निखारने की कुंजी है।

माँ का दूध बच्चों के लिए अमृत

डॉ. सीमा त्यागी[1] एवं वसुप्रिया पराशर[2]

माँ का दूध करता बच्चे का पोषण,
रखता उसे हष्ट और पुष्ट।
पाचन तंत्र को यह दूध मजबूत
बनाता, बीमारियों को दूर भागता।
अतः जन्म के बाद छः माह तक
केवल शिशु को स्तनपान कराओ।।

माँ का दूध नवजात शिशु के लिए एक प्राकृतिक और उत्तम पोषण होता है। माता का दूध शिशु के लिए अमृत समान है। जैसे–जैसे गर्भ में शिशु की वृद्धि होती जाती है, स्तनों की दुग्ध ग्रंथियाँ सक्रिय हो जाती हैं एवं प्रसवोपरान्त उनमें दूध का निर्माण होने लगता है। जैसे–जैसे बच्चे केवल माँ के दूध से लेकर ठोस खाद्य पदार्थों तक पहुँच रहे हैं, माँ का दूध आवश्यक पोषक तत्वों का एक महत्वपूर्ण स्रोत बना हुआ है। हालाँकि, विश्व में 12–23 महीने की उम्र के पाँच में से केवल तीन बच्चे (61 प्रतिशत) ही माँ के दूध का लाभ उठा पाते हैं। यूनिसेफ (UNICEF)

लाभ : मां का दूध शिशु के लिए उत्तम होने के साथ–साथ इससे अन्य कई लाभ भी है, जैसे रू

1. माँ के प्रारम्भिक दूध में पीले रंग था गाढा तरल पदार्थ जिसे "कोलस्ट्रम" कहते है, निकलता है। इसमें रोग प्रतिरोधक क्षमता का विलक्षण एवं अद्द्भुत गुण पाया जाता है। इसमें अधिक मात्रा में प्रोटीन, विटामिन ए एवं डी. एच. ए. पाया जाता है। इसमें इम्युनोग्लोब्युलिन्स की मात्रा दूध की अपेक्षा अधिक होती है, जो शिशु को विभिन्न सूक्ष्म जीवाणुओं– विषाणुओं के संक्रमण से रोकता है एवं रोगों से रक्षा करता है। यह शिशु को मिला एक वरदान है जिसे व्यर्थ नहीं जाने देना चाहिए।
2. नवजात शिशु के पाचन अंग अत्यन्त ही अपरिपक्व दशा में होते हैं, जो केवल माता के दूध को ही सरलता व सुगमता से पचा पाते हैं। जैसे–जैसे शिशु का पाचन अंग परिपक्व होता जाता है, माता का दूध भी गाढ़ा होता जाता है।
3. स्तनपान कराने से माँ एवं शिशु दोनों को ही मानसिक संतुष्टि प्राप्त होती है, जिससे भावनात्मक सम्बन्ध दृढ होते हैं ।
4. माँ के दूध में एन्टीबॉडी पाए जाते हैं, जो सूक्ष्मजीवों एवं रोगों से लड़ने की प्रदुभुत क्षमता युक्त होते हैं।
5. यह शिशु के लिए सुगमता से उपलब्ध रहता है।
6. स्तनपान करने से माँ का गर्भाशय शीघ्रता से अपने पूर्वा आकार में आ जाता हैं एवं प्राकृतिक गर्भ निरोध की तरह भी होता है।
7. शिशुओं में संक्रमण, एलर्जी की संभावना कम होती है।
8. माँ का दूध एक परिपूर्ण आहार है क्योंकि इसमें सभी पौष्टिक तत्व उचित अनुपात एवं आवश्यक मात्रा में विद्यमान रहते हैं, जो शिशु के पोषण एवं उत्तम स्वास्थ्य के लिए नितान्त जरूरी होते हैं।

दूध में उपस्थित पौष्टिक तत्व एवं उनकी भूमिका :

माँ को दूध का संगठन (प्रति 100 ग्रा) :
माँ को दूध में, ऊर्जा– 67 कि. कैलोरी, प्रोटीन– 1.3 ग्रा, कार्बोहाइड्रेट– 7.0 ग्रा, वसा– 4.2 ग्रा., सोडियम– 15 मिग्रा, कैल्शियम– 35 मिग्रा, फॉस्फोरस– 15 मिग्रा, आयरन– 76 एमसीजी, विटामिन ए– 60 एमसीजी, वियमिनट सी– 3.8 मिग्रा, विटामिन डी –0.01 एमसीजी पाए जाता हैं। इसके अलावा अन्य पोषण तत्व जैसे बीटा–कैरोटीन, थाइमिन, राइबोफ्लेविन और अल्फा–लैक्टलबुमिन भी पाए जाते हैं। (शिशु पोषण परिषद)

कार्बोज – माँ के दूध में लैक्टोज की मात्रा अधिक होने से यह मीठा होता है, इसी तरह गैलेक्टोज शिशुओं के मानसिक विकास में सहायक होते हैं।

प्रोटीन – माँ के दूध में प्रोटीन की मात्रा कम होने से अपरिपक्व आमाशय एवं आंतों द्वारा आसानी से

1 सहायक आचार्य एवं 2 विद्यावाचस्पति,
गृह विज्ञान प्रसार एवं संचार प्रबंधन, स्वामी केशवानंद राजस्थान कृषि विश्वविद्यालय, बीकानेर

पचा लिया जाता है एवं किडनी पर कम भार देता है। साथ ही दिमागी विकास के लिए आवश्यक सभी एमिनो एसिड पाए जाते हैं।

वसा – असंतृप्त वसीय अम्ल जैसे लिसोलिक एवं लिनोलिनिक अम्ल एवं डी.एच. ए. उपस्थित होते हैं जो सुपाच्य एवं विकास में सहायक हैं।

खनिज लवण – माता के दूध में उतनी ही मात्रा में कैल्शियम, फॉस्फोरस एवं अन्य लवण उपस्थित होते हैं, जितने उत्तम स्वास्थ्य के लिए आवश्यक हैं एवं वृक्क पर भी कम भार देते हैं ।

हार्मोन – मातृ दुग्ध वृद्धि को प्रभावित करने वाले एवं अन्य सभी हार्मोन का एक उत्तम स्त्रोत है जैसे टी.एस. एच., थाइरॉक्सिन, पैराथाइरॉइड हार्मोन, कैल्सिटोसिन, ऑक्सीटोसिन आदि।

विटामिन सी – माता के दूध में अपेक्षाकृत अधिक मात्रा में विटामिन सी पाया जाता है जो रोग रोधक क्षमता तथा त्वचा एवं मसूड़ों को स्वस्थ रखता है।

रोग प्रतिरोधक तत्व–

इम्यूनोग्लोब्युलिन्स– सभी प्रकार के एन्टीबॉडी एवं प्ळ। शिशुओं को सुरक्षा प्रदान करते हैं । आमाशयिक आंत्र मार्ग एवं अन्य अंगों की श्लेष्मिक झिल्ली की सूक्ष्म जीवों से रक्षा करते हैं।

लैक्टोफेरिन– लेक्टफेरिन नामक प्रोटीन में लौह तत्व को बांधने की क्षमता पाई जाती है यह शिशु की एनीमिया से रक्षा करता है।

लैक्टोबेसिलस बाइपिडस फेक्टर– यह मां के दूध में प्रचुरता से पाया जाता है, गाय के दूध में अनुपस्थित होता है । यह कारक लैक्योबेसिलस बाइपिड्स जीवाणु की वृद्धि एवं विकास में महत्वपूर्ण योगदान देता है। यह शिशु के आंत में पाया जाता है तथा पाचन क्रिया में सहायता पहुंचाता है।

एन्जाइम– मातृ दूध सभी आवश्यक एन्जाइम की पूर्ति करता है।

माँ के के दूध की महिमा

यह एक ईश्वरीय वरदान है जो पौष्टिक एवं स्वास्थ्यवर्द्धक होता है। शिशुओं के उत्तम शारीरिक एवं मानसिक विकास में सहायक होता है। सुपाच्य, समय, शक्ति व श्रम की बचत के साथ ही शिशुओं में सुरक्षा का भाव प्रदान करता है। कीटाणु,जीवाणु व विषाणु रहित, रोग–प्रतिरोधक की विलक्षण क्षमता से युक्त, हमेशा ताजा एवं उचित तापक्रम पर उपलब्ध रहता है ।

कब से कब तक पिलाएं – जन्म के तुरंत पश्चात से 6 माह की आयु तक शिशु को माता के दूध के अलावा और कोई दूध नहीं पिलाना चाहिए। स्वस्थ माता अपने शिशु को 1 वर्ष तक भरपेट दूध पिला सकती है। किन्तु छः माह बाद शिशु को स्तनपोषण के अतिरिक्त अन्य खाद्य–पदार्थ भी देने चाहिए। एक बार पूरक आहार शुरू हो जाने के बाद, माँ का दूध 2 साल तक जरूरी पोषक तत्व और विकास कारक प्रदान करता रहता है। ऑस्ट्रेलिया और न्यूजीलैंड में, शिशु के जीवन के पहले साल के दौरान माँ के दूध की सलाह दी जाती है और अगर माँ और शिशु को यह ठीक लगे तो इसे जारी रखा जाता है। विश्व स्वास्थ्य संगठन की सलाह है कि 2 साल की उम्र तक और उसके बाद भी बच्चे के आहार में माँ का दूध शामिल होना चाहिए। (WHO)

स्तनपान कराते समय सावधानियाँ–

1. स्तनपान कराने से पूर्व स्तनों को भली भाँती साफ कर लेना चाहिए।
2. शिशु को गोद में लेकर प्रेम पूर्वक, प्रसन्नचित्त मुद्रा में स्तनपान करवाना चाहिए।
3. स्तन पान कराते समय माता शिशु के सिर को अपनी बाँह का सहारा देकर कुछ ऊपर उठा लेना चाहिए, जिससे उसका मुँह स्तन तक पहुँच जाए। फिर दूसरे हाथ से स्तन को सहारा देकर शिशु के मुँह में लगाना चाहिए। हाथ के अंगूठे एवं उंगली के बीच माँ अपने स्तनों को इस तरह से पकड़े कि शिशु की नाक ना दब सके।
4. लेटकर स्तनपान नहीं करवाना चाहिए।
5. शिशु को बारी बारी से दोनों स्तनों से स्तनपान करवाना चाहिए ।
6. स्तनपन से पूर्व तथा बाद में साफ गुनगुने पानी में मुलायम कपडा भिगोकर निप्पल को पोंछ लेना

चाहिए।

कब ना पिलाएँ — यदि माँ अत्यधिक कमजोर है, रक्त की कमी है, संक्रामक रोग से ग्रसित, तीव्र बुखार, सिपलिस रोग या अत्यधिक क्रोध एवं मानसिक तनाव मे स्तनपान नहीं करवाना चाहिए। विश्व स्वास्थ्य संगठन पहले छह महीनों के लिए केवल स्तनपान की सलाह देता है। हालाँकि ऐसी परिस्थितियाँ होती हैं जब केवल स्तनपान संभव नहीं होता है। इन परिस्थितियों में, अच्छे डॉक्टर की सलाह से, शिशु को स्तनपान और फॉर्मूला दोनों तरह से दूध पिलाना संभव है। आंशिक बोतल से दूध पिलाने की शुरुआत स्तनपान को नकारात्मक रूप से प्रभावित कर सकती है। स्तन दूध का आंशिक प्रतिस्थापन केवल शिशु फार्मूले से ही किया जाना चाहिए, बिना संशोधित गाय का दूध (पतला या बिना पतला) या अन्य तरल पदार्थ से नहीं किया जाना चाहिए क्योंकि ये अनुपयुक्त हैं और खतरनाक हो सकते हैं। फार्मूला निर्देशों के अनुसार बनाया जाना चाहिए और बोतल में कोई अन्य भोजन नहीं मिलाया जाना चाहिए।

शिशु फॉर्मूले की तुलना मे स्तन का दूध है बेहतर :

माँ का दूध शिशु को खिलाने का सामान्य तरीका है और स्वस्थ शिशुओं के लिए पोषण का सबसे अच्छा स्रोत है। इसमें शिशुओं के लिए पोषक तत्वों का सही संतुलन होता है और इसमें संक्रमणरोधी तत्व भी होते हैं जो शिशु को संक्रमण से बचाते हैं। स्तनदूध प्रतिरक्षात्मक लाभ प्रदान करता है जो बीमारी की घटनाओं को कम कर सकता है और जो बाद के बचपन तक जारी रह सकता है। इनमें न केवल एंटीबॉडी और अन्य प्रतिरक्षा–सुरक्षात्मक प्रोटीन शामिल हैं, बल्कि जीवित कोशिकाएँ भी शामिल हैं। जबकि शिशु फॉर्मूले में ये सब पोषक तत्व नहीं होते ।

दूध पिलाने का अन्तराल : यह शिशु के स्वास्थ्य, शरीर का भार, क्षमता एवं दूध की मात्रा पर निर्भर करता है। सामान्यतया 4– 4 घंटे के अन्तराल से 7 से 10 मिनट की अवधि तक स्तनपान करवाना चाहिए।

डकार दिलाना (Burping) : स्तनपान कराते समय थोडी बहुत वायु शिशु के पेट में अवश्य ही चली जाती है, अतः शिशु को डकार दिलाना अत्यावश्यक है। इसके लिए माँ शिशु को कांधे से लगाके हल्के हल्के हाथों से शिशु की पीठ पर थपथपाए तो हवा बाहर आ जाती है ।

दूध पिलाने वाली (धात्री) माता का भोजन कैसा हो :

धात्री माता का पोषण सामान्य महिला से अतिरिक्त कैलोरी, प्रोटीन, वसा, बीटा –कैरोटीन, विटामिन–बी, विटामिन–सी, एवं फोलिक एसिड युक्त होना चाहिए। प्रसव के बाद स्तनपान कराने वाली माता को सरलता से पचने वाला उच्च

कैलोरीयुक्त सुपाच्य भोजन देना चाहिए । धीरे–धीरे आहार की मात्रा बढ़ानी चाहिए। दूध एवं दूध से बने पदार्थ पर्याप्त मात्रा में लेने चाहिए।अधिक दूध–क्षरण के लिए तरल पेय पदार्थ लेना चाहिए । प्रतिदिन आधा से एक लीटर तक दूध लेना चाहिए। कब्ज से बचने के लिए चोकर सहित आटे की रोटी, छिलकेदार दाल, सलाद, हरी पत्तेदार सब्जियों एवं अन्य सब्जियों का सेवन करना चाहिए। विटामिन सी, कैल्शियम युक्त एवं लौह युक्त आहार लेना चाहिए। धात्री माता के आहार से दूध की मात्रा एवं गुणात्मकता प्रभावित होती है। अतः उसे प्रोटीन, विटामिन एवं खनिज लवण युक्त आहार लेना आवश्यक है ।

धात्री माता के लिए कुछ व्यंजन — बादाम खीर, गाजर का हलवा, कास्टर्ड, सूप, पनीर पराठां, सिंघाड़े के बिस्किट, गोंद के लड्डू, इत्यादि का सेवन जरूर करना चाहिए ।

युवाओं के लिए लाभदायक व्यवसाय खरगोश पालन

संजय[1], डॉ. कुलदिप प्रकाश शिंदे[2]

वर्तमान में खरगोश पालन युवाओं के लिए एक लाभदायक व्यवसाय है। खरगोश पालन बहुत कम लागत वाला होने के साथ ही इसे घर के पिछवाडे, छत अथवा बगीचे में भी शुरू किया जा सकता है। खरगोश को शहतूत कि पत्तियां, रिजका, जई, ज्वार, बाजरा, मक्का, घास के अतिरिक्त रसोई घर का बचा हुआ प्रदार्थ जैसे मटर, गाजर, टमाटर, काकड़ी, गोभी, शलजम, मूली के छिलके आदि खिलाकर भी पाला जा सकता है। लगभग 4 महीने में खरगोश के बच्चे का वजन 2 से 3 किलो हो जाता है। खरगोश की विष्ठा में उर्वरकता होती है जिसे बेच कर अतिरिक्त पैसा कमाया जा सकता है। खरगोश का मांस अधिक पौष्टिक अधिक प्रोटीन और कम वसा वाला तथा सबसे कम कैलोरी का होता है जिसके कारण मोटापा, हृदयरोग उच्च कोलेस्ट्रॉल, उच्चरक्त चाप,मधुमेह एवं कैंसर जैसे रोगों में उपयोगी साबित हुआ है। इसके साथ खरगोश को चमड़ा, ऊन तथा प्रयोगशाला में शोध एवं मनोरजंन हेतु भी पाला जाता है। खरगोशों का पालन भारत में लम्बे अरसे से होता आ रहा है इसलिए फार्मिंग बिजनेस के लिए खरगोश पालन को चयनित करना एक लाभकारी कदम है भारतवर्ष की जलवायु और मौसम खरगोश पालन के लिए उपयुक्त मानी जाती है कुछ किसान भाई खरगोश पालन करके प्रति वर्ष दस से बारह लाख की कमाई भी कर रहे है इसके भारी मुनाफे को देखते हुए पढ़े–लिखे नौजवान युवा साथी भी इस व्यवसाय में अपना हाथ आजमा रहे है

खरगोशों में प्रजनन एक मौसमी प्रक्रिया है, जिसमें मादा खरगोशों में संभोग के बाद ही अंडोत्सर्ग होता है मादा खरगोशें आम

तौर पर 4 से 5 महीने की उम्र में यौन परिपक्वता प्राप्त कर लेती हैं जबकि नर खरगोशों में यह 5 से 6 महीने की उम्र में होता है। खरगोश में गर्भाअवधि लगभग 30 से 32 दिनों कि होती है और मादा खरगोश एक बार में 1 से 12 बच्चों को जन्म दे सकती है।

खरगोश पालन के लिए जलवायु व मौसम –

खरगोश पालन के लिए आदर्श तापमान 20 से 25 डिग्री सेल्सियस होता है। अत्यधिक तापमान खरगोश पालन के लिए हानिकारक होता है तथा खरगोशों के लिए उपयुक्त आर्द्रता 50–60 प्रतिशत होनी चाहिए अधिक आर्द्रता खरगोश पालन में स्वास्थ्य समस्याएं पैदा कर सकती है ग्रीष्मकाल में खरगोशों को ठंडे और छायादार स्थान पर रखना चाहिए। उन्हें पर्याप्त पानी और ठंडा चारा देना चाहिए शीतकाल मौसम में खरगोशों को गर्म और सूखे स्थान पर रखना चाहिए। उन्हें पर्याप्त गर्म चारा और पानी देना चाहिए तथा वर्षा ऋतु में खरगोशों को सूखे और स्वच्छ स्थान पर रखना चाहिए जिनसे जानवरों में कम से कम बीमारी आए।

आवास प्रबधंन–

1. खुली विधि – यदि किसान साथी या युवा शौक या घरेलु उपयोग के लिए खरगोश पालन करना चाहते हैं, तो खुली विधि आपके लिए बहुत ही उपयुक्त है। इस विधि में आंगन, छत या खेत में खरगोश के लिए आवास प्रबधंन कर सकते हैं।

2. डीप लिटर विधि – यदि युवा कम मात्रा में खरगोश पालन करना चाहते है, तो यह विधि अपना सकते हैं इस विधि में ठोस कंक्रीट से घरनुमा आवास बनाई जाती है। इस विधि में आप अधिकतम 25 से 30 खरगोश रख सकते हैं। इस विधि में बीमारी लगने की ज्यादा सम्भावना होती हैं। अतः किसान भाइयों एवं युवाओं को मेरी सलाह है कि आप खुले या पिंजरा विधि से ही खरगोश पालन करें।

3. पिंजरा विधि – पिंजरा विधि में खरगोश पालन व्यवसायिक दृष्टि से सबसे उपयुक्त है। इस विधि में खरगोश एक पिंजरे में रखे जाते हैं,

1.स्नातकोत्तर छात्र, 2.सहायक प्राध्यापक (एल.पी.एम.) पशुधन उत्पादन और प्रबंधन विभाग, स्वामी केशवानन्द राजस्थान कृषि विश्वविद्यालय, बीकानेर–334006 मोबाइल नंबर 9785512724 ईमेल ngc.sanjay2000@gmail.com

जो तार या लोहे की प्लेट से बने होते हैं। पिंजरा विधि खरगोश की अधिकतम संख्या बढ़ाने के लिए बहुत उपयोगी है। प्रत्येक पिंजरे के अंदर पर्याप्त जगह और आवश्यक सभी सुविधाएं होती है इस विधि में आप नर व मादा और बच्चे को अपनी सुविधा और प्रजनन के हिसाब से रख सकते हैं। सामान्यतः एक व्यस्क खरगोश को 60•45•45 सेंटीमीटर आकार का पिंजरा चाहिए। ब्याने वाली मादाओं के लिए 90•45•45 सेंटीमीटर के पिंजरे रखे जाते है।

खरगोश कि कुछ प्रमुख नस्लें –

1. न्यूजीलैंड व्हाइट एक लोकप्रिय नस्ल है जो अपने सफेद रंग और उच्च मांस उत्पादन के लिए जानी जाती है।

2. कैलिफोर्निया नस्ल अपने सफेद रंग और काले या भूरे रंग के निशानों के लिए जानी जाती है।

3. फ्लेमिश जायंट खरगोशों की सबसे बड़ी नस्लों में से एक है, जो अपने बड़े आकार और विभिन्न रंगों के लिए जानी जाती है।

4. होलैंड लोप एक छोटी नस्ल है जो अपने छोटे कानों और विभिन्न रंगों के लिए जानी जाती है।

5. मिनी लोप यह एक छोटी नस्ल है जो अपने छोटे आकार और विभिन्न रंगों के लिए जानी जाती है।

6. अंगोरा नस्ल अपने लंबे और मुलायम बालों के लिए जानी जाती है।

अन्य खरगोश कि नस्लों में **बेल्जियन हरे और डच** इत्यादि हैं**।**

आहार प्रबंधन –

खरगोश पालन में आहार प्रबंधन अत्यधिक महत्वपूर्ण होता है। अपने खानपान के मामले में खरगोश एक अद्भुत प्राणी है। पाचन तंत्र की विशेष रचना के कारण यह घास तथा अन्य हरे चारों को आसानी से पचा लेता है। यहां तक कि यह अपने मल में त्यागे गए पौष्टिक तत्वों को पुनः उपयोग कर लेता है।(त्यागे गए खुद के मल को यह दुबारा खाता है) सफल खरगोश पालन के लिए 18 से 20 प्रतिशत प्रोटीन 22000 किलोग्राम कैलोरी ऊर्जा तथा 15–20 प्रतिशत रेशे वाला आहार देना चाहिए। व्यवसायिक स्तर पर गोलियों के रूप में तैयार संतुलित आहार देना चाहिए एक वयस्क खरगोश की 100 से 120 ग्राम प्रतिदिन आहार की आवश्यकता होती है। अगर इसके साथ दिन में कोई एक हरा चारा दे तो आहार की मात्रा 20 से 25 प्रतिशत तक कम की जा सकती हैं चारे व दाने में कभी भी अचानक बदलाव नहीं करना चाहिए साथ ही दाने का भंडार नमी से बचाकर सुखी जगह पर करना चाहिए। जिससे दाने को फफूंदी एवं अफ्लाटॉक्सिन जैसे विषैले पदार्थों के संक्रमण से बचाया जा सके।

खरगोश में होने वाली बीमारियाँ –

वायरल बीमारिया

1. माइक्सोमैटोसिस – यह एक गंभीर बीमारी है जो खरगोशों में मृत्यु दर को बढ़ाती है।

2. खरगोश रक्तस्रावी रोग (आरएचडी) – यह एक अत्यधिक संक्रामक रोग है जो खरगोशों में आंतरिक रक्तस्राव का कारण बनता है।

बैक्टीरियल बीमारिया

1. पास्चुरेल्लोसिस – यह एक सामान्य श्वसन संक्रमण है जो खरगोशों में नाक के बहने, छींकने और सांस लेने में कठिनाई का कारण बनता है।

2. कोक्सीडियोसिस – यह एक परजीवी संक्रमण है जो दस्त और वजन घटाने का कारण बनता है।

अन्य बीमारियो में दाद जो एक फंगल संक्रमण है जो त्वचा पर खुजलीदार, पपड़ीदार घावों का कारण बनता है। तथा हेयरबॉल जो खरगोशों द्वारा अपने बालों को चाटकर निगलने से बनते हैं जो पाचन तंत्र में फंस सकते हैं एन्सेफेलिटोजूनोसिस जो एक परजीवी संक्रमण है जो तंत्रिका तंत्र को प्रभावित करता है।

युवाओं को खरगोश पालन में ध्यान देने योग्य बातें –

1.दस मादा खरगोशों के लिए एक नर खरगोश रखें तथा गर्भवती और छोटे बच्चों पर विशेष ध्यान दें

2. किसान साथी समय समय पर खरगोश के आवास में हवा और रोशनी की समुचित व्यवस्था जलवायु एवं मौसम के अनुसार उचित बनाए रखें।

3. पिंजरों को हमेशा साफ–सुथरा रखें तथा शेड के आसपास पेड़–पौधे जरूर होने चाहिए शेड की चूने से पुताई कम से कम साल में दो बार करें, गर्मियों में खरगोशों पर पानी छिड़काव और शेड को ठंडा रखें खरगोश के बीमार पड़ने पर पशु विशेषज्ञ या चिकित्सक से संपर्क करें।

अक्टूबर माह के कृषि कार्य

डॉ. विजय प्रकाश, निदेशक अनुसंधान
स्वा. के. रा. कृ. वि., बीकानेर

सस्य विज्ञान

प्रभावी बिन्दू :–(1) समय पर बुवाई करें।(2) बुवाई के लिये प्रमाणीकृत बीज काम में लेवें।(3) बुवाई से पूर्व बीजोपचार करके बुवाई करें। (4)उर्वरक का समुचित प्रयोग करें एवं ऊरकर देवें।

सरसों : भूमि का चुनाव एवं खेत की तैयारीः– सरसों की खेती सिंचित एवं असिंचित दोनो अवस्थाओं में की जाती है। बारानी फसल के लिये खाली छोड़े गये खेतों में जहॉ नमी संरक्षित की गई है में बत्तर आने पर जुताई कर पाटा चलावें इसके बाद बुवाई करें सिंचित फसल के लिये खेत में पलेवा कर खेत तैयार करे। **बीज की मात्रा एवं बुवाई** :– फसल के लिये 3–4 किलोग्राम प्रति हैक्टेयर के हिसाब से बीज डालें। कतार से कतार की दूरी 30 से.मी. शुष्क क्षेत्रों में तथा 45 से.मी. नहरी एवं सिंचित फसल में रखें। पौधे से पौधे की दूरी 10 से.मी. रखें। बीज 5 से.मी. की गहराई पर डालें। बीज के ऊपर अधिक सुखी मिट्‌टी न पड़े।बारानी फसलों की बुवाई 1 अक्टूबर से 15 अक्टूबर के मध्य कर देनी चाहिये। सिंचित क्षेत्र मे बुवाई अक्टूबर के अन्त तक करें तथा देरी से बुवाई की अवस्था में 25 अक्टूबर से 10 नवम्बर तक किया जाना चाहिए। देर से बुवाई करने पर उपज में कमी आना स्वाभाविक है।

उर्वरक प्रयोग :– सिंचित फसल के लिये 90 किलोग्राम नत्रजन 30–40 किलोग्राम फास्फोरस एवं 250 किलोग्राम जिप्सम या 40 किलोग्राम सल्फर प्रति हैक्टेयर डालें। बारानी फसल के लिये सिंचित फसल की आधी मात्रा उर्वरक काम में ले।नत्रजन की आधी मात्रा व फास्फोरस की पूरी मात्रा बुवाई के समय ऊरकर देवें। शेष नत्रजन की आधी मात्रा फसल में सिंचाई के समय डालें। असिंचित फसल में ऊपर बताये गये उर्वरक मात्रा की आधी मात्रा ही बुवाई के समय काम में ले।

उपयुक्त किस्में : टी–59 (वरुणा), पी.आर.–15 (क्रान्ति), पी.आर.–50 (पूसा बोल्ड),बायो–902 (पूसा जयकिसान),पी.सी.आर.–7 (रजत),आर.एन.–393 (अरावली),आर.एल.एम.–619 एवं आर.एच.–30, आर.एन.जी.–48, आर.जी.एन.–229 एवं आर.जी.एन.–73, गिरिराज

तारामीरा : इसकी खेती अधिकांशतः बारानी क्षेत्रों की जहॉ अन्य फसलों का होना कठिन हो वहां की जाती है। **भूमि एवं खेती की तैयारी** : खरीफ चारे की फसल अथवा फसलों के काटने के बाद उपयुक्त नमी की अवस्था में जुताई कर पाटा चलावें। तत्तपश्चात् बुवाई करें।**बीज की मात्रा** : चार से पॉच किलोग्राम शुद्ध बीज प्रति हैक्टर डालें। कतार से कतार की दूरी 40 से.मी. रखें। बुवाई 15 सितम्बर से 15 अक्टूबर के मध्य करें। **उर्वरक प्रयोग** : 30 किलोग्राम नत्रजन तथा शेष 15 किलोग्राम फास्फोरस प्रति हैक्टर बुवाई के समय ड्रिल करें। **उपयुक्त किस्में**: आई.टी.एस.ए. , टी–27

जई :– भूमि की तैयारी : बलुई दोमट भूमि उपयुक्त है दो बार जुताई कर पाटा चलावें पुनः पलेवा कर क्रास जुताई कर पाटा चलावें तब बुवाई करें। संरक्षित नमी की अवस्था में सीधे बुवाई करें।

बुवाई का समय एवं बुवाई : अक्टूबर के प्रथम सप्ताह से मध्य नवम्बर तक बिजाई करें।100–125 किलोग्राम बीज प्रति हैक्टर के हिसाब से डालें कतार से कतार की दूरी 20 से.मी. रखें। **उपयुक्त किस्में**: (1) केन्ट,(2) ओ.एस.–6(3)एच.एफ.ओ.–114(4) आई.जी.एफ.आर.आईएस.–2688 (5)ओ.एस.–9 **उर्वरक प्रयोग** : एक हैक्टर खेत में 80–10 किलोग्राम नत्रजन 40–60 किलोग्राम फास्फोंरस डालें। आधा नत्रजन तथा सम्पूर्ण फास्फोरस बुवाई के समय ऊरकर डालें। शेष 1/4 बुआई के 30–45 दिन बाद तथा 1/4 प्रथम कटाई के बाद डालें।

चना : भूमि का चुनाव एवं तैयारी : बारानी क्षेत्रों में भूमि में संरक्षित नमी की अवस्था में बत्तर आने पर जुताई करें पाटा चलावें व चने की बुवाई करें। जहां सिंचाई सुविधा है वहॉ पलेवा कर खेत तैयार करें तब बुवाई करें। **बीज की मात्रा व बुवाई** : 60–80 किलोग्राम बीज जो प्रमाणीकृत तथा उपचारित है, एक हैक्टर के लिये पर्याप्त है। कतार से कतार की दूरी 30 से.मी. रखें। सिंचित क्षेत्र में बीज 5–7 से.मी. तथा बारानी क्षेत्रों में 7–10 से.मी. की गहराई पर डालें। बारानी फसलों की बुवाई अक्टूबर के प्रथम सप्ताह तक कर देना चाहिये। **उपयुक्त किस्में** : जी.एन.जी.–469 (सम्राट), जी.एन.जी.–663, (वरदान), जी.एन.जी.–1581(गणगौर), जी.एन.जी.–146, आर.एस.जी.–44(उमराव), एच.–208,

सी.–235, आर.एस.जी.–888, आर.एस.जी.–945, आर.एस.जी.–807, जी.एन.जी.–1957, जी.एन.जी.–2144 **उर्वरक प्रयोग** : बारानी फसल में 10 किलोग्राम नत्रजन तथा 32 किलोग्राम फास्फोरस तथा सिंचित फसल में 20 किलो नत्रजन 32 किलोग्राम फास्फोरस प्रति हैक्टर डालें। उर्वरक 12–15 से.मी. गहरा ऊर कर देवें।

कीट विज्ञान :

नरमा : कीड़ों का अधिक प्रकोप हो जैसे कि चित्तीदार लट, अमेरिकन लट तो अक्टूबर के प्रथम सप्ताह में पांचवा छिड़काव कर सकते है इसमें मोनोक्रोटोफास या पाइथ्रोईड्स का प्रयोग न करें। बल्की क्यूनालफॉस 25 ई. सी 250 मि.ली. मि.ली. या ऐसीकेट 75 प्रतिशत 250 ग्राम प्रति बीघा की दर से छिड़काव करें।

नोट : गुलाबी लट कपास से अपूर्ण व अर्द्धविकसित एवं बगैर खुले टिण्डो के अन्दर जीवित रहती है अतः जमीन पर गिरे हुए टिण्डों व इस प्रकार के टिण्डो को इक्ट्ठा करके जला देवें। यह कार्य नरमा की पूर्ण चुगाई पश्चात् करवायें।

चना : चने की बुवाई से पूर्व भूमि उपचार अवश्य करें। मिथाइल पैराथियोन 2 प्रतिशत चूर्ण या फेनवलरेट चूर्ण का 6 किलोग्राम प्रति बीघा की दर से अन्तिम जुताई के समय खेत में मिला देवें।

बीजोपचार : बुवाई से पूर्व अगर भूमि उपचार नहीं किया है तो 600 मि.ली. क्लोरपाइरीफॉस–20 ई.सी. का एक क्विंटल बीज के अनुसार बीजोपचार करें तथा साथ में 5 लीटर पानी का भी प्रयोग करें। इससे फसल के आरम्भ में दीमक आदि से बचाव हो जायेगा।

सब्जियॉ : टमाटर :सफेद मक्खी या फल छेदक का प्रकोप हो तो मेलाथियॅान 50 ई.सी. का 10 मि.ली. प्रति 10 लीटर पानी में घोल बनाकर छिड़काव करें। आए हुए फलों को 7 दिन के अन्तराल पर तोड़े।

मिर्च : सफेद मक्खी का प्रकोप हो तो मेलाथियॅान कीटनाशी का 10 मि.ली. प्रति 10 लीटर पानी में घोल बनाकर छिड़काव करें।

पौध व्याधि :

चना : अक्टूबर माह में बुआई के तुरन्त बाद लगने वाली संभावित व्याधियॉ

(अ) उकठा रोग :–इसे चने का विल्ट रोग भी कहते हैं। यह रोग फ्यूजेरियम आक्सीस्पोरम नामक कवक द्वारा फैलता है। जो कि मृदोढ़ रोग है। बुआई के 10–15 दिन पश्चात् ही रोग के लक्षण दिखाई पड़ जाते है। चने का पौधा ऊपर से मुरझाकर सूखना शुरु हो जाता है। मुरझाये हुये पौधे को उखाड़कर देखने पर जड़े पूरी तरह विकसित परन्तु मुख्य जड़ को चीर कर देखने पर बीच में हल्के भूरे या गुलाबी रंग की धारी दिखाई पड़ती है जहां पर फ्यूजेरियम फफूंद के कोनिडिया इकट्ठा होने से जड़ों द्वारा भूमि से मिलने वाला भोजन पानी लेने वाला संवहन तंत्र अवरुद्व हो जाता है। फलस्वरुप पौधा मुरझाकर मर जाता है। **रोकथाम** : बुआई से पूर्व कार्बेन्डिाजिम नामक फफूंदनाशी दवा का 1.5–2.0 ग्राम/किलो बीज की दर से बीजोपचार करके बुआई करें।

(अ) रोगरोधी किस्मों की बुवाई करें –चने की सी –235 किस्म की बुआई सिंचित व असिंचित क्षेत्र में करावे जो एस्कोकाइटा ब्लाइट रोगरोधी है। दूसरी किस्में जी.एन.जी. –146, जी.एन.जी.–1488, एवं जी.एन.जी.–1969 भी इस रोग की प्रतिरोधी है।

(ब) जड़ सड़न रोग :–यह रोग राइजोक्टोनिया नामक फफूंद द्वारा फैलता है। पौधा मुरझाकर मर जाता है। रोगी पौधे को उखाड़ कर देखने पर जड़े काली पड़ी हुई नजर आती है। नियंत्रण हेतु बुआई से पूर्व कार्बेन्डिाजिम 1.5 से 2 ग्राम/किलो से बीजोपचार करावें।

(स) कालर रोट :–यह रोग मेक्रोफोमिना नामक फफूंद के कारण होता है जो कि मृदोढ़ रोग है पौधा अचानक मुरझाकर मरना शुरु हो जाता है फलस्वरुप पौधे की जड़े भूमि की सतह के पास से काली पड़ जाती है। नियंत्रण हेतु बुवाई से पूर्व 2 ग्राम बाविस्टिन प्रति किलो बीज की दर से बीजोपचार करके बुवाई करावें। अन्य प्रमुख रोगरोधी किस्में:(1) जी.एन.जी. 663 (वरदान) उकठा रोग प्रतिरोधी किस्म। (2) जी.एन.जी. 469 (सम्राट) मोटे दाने वाली किस्म इस किस्म में उकठा, जड़गलन, कालररोट, झूलसा रोग की प्रतिरोधी क्षमता पाई गई है।

सरसों व तारामीरा :(अ) बुवाई से पूर्व सफेद रोली रोग से बचाव हेतु एप्रोन 35 एस.डी. नामक फफूंदनाशी दवा से 6 ग्राम/किलो बीज की दर से बीजोपचार करें।(ब) बुआई से पूर्व मैंकोजेब 2 ग्राम प्रति किलो बीज की दर से बीजोपचार करे। इससे कवक द्वारा होने वाली बीमारियों का प्रकोप कम होगा।उन्नत किस्में:– वरुणा, पूसा बोल्ड, आर.एल.एम. –619 (सरसों) तारामिरा–टी.27

कपास :**जीवाणु अंगमारी (ब्लेकआर्म)** : यह रोग

जेन्थोमोनास मालवेसिएरम नामक जीवाणु द्वारा होता है का प्रकोप कपास के टिण्डो पर भी होता है के रोकथाम हेतु 200 मि.ग्रा. स्ट्रेप्टोसाइक्लिन व 2 ग्राम कॉपर आक्सीक्लोराइड प्रति लीटर पानी में घोल बनाकर लक्षण दिखाई देते ही छिड़काव अवश्य करे।

सब्जी :–

भिण्डी –पीत शिरा मोजेक रोग :–यह रोग जैमिनी वायरस द्वारा फैलता है। सफेद मक्खी (बेमिसिया टेबेसाई) रोग का संचरण करती है। पत्तियों की शिराये पीली होकर पत्ती मुरझा जाती है। रोकथाम हेतु फल आने से पूर्व डाइमेथोएट 0.03 प्रतिशत घोल (कीटनाशक) का छिड़काव करें।

बैंगन :–छोटी पत्ती रोग :– यह रोग फाइटोप्लाज्मा कैन्डीडस (माइकोप्लाज्मा) द्वारा होता है। पत्तियों का आकार छोटा होकर गुच्छे के रुप में हो जाता है व पौधा पीला पड़ कर मर जाता है। फल व फूल नही लग पाते है।रोकथाम :–रोग ग्रसित पौधे को उखाड़कर नष्ट करें। यह रोग जेसिड नामक कीट द्वारा संचारित होता है। इसकी रोकथाम हेतु 1 मि.ली. मेलाथियान/लीटर पानी के हिसाब से छिड़काव करे। ट्रेट्रासाइक्लिन (प्रति जैविक) के छिड़काव से (250 पी.पी.एम.) भी रोग का प्रकोप कम होता है।

मिर्च एवं टमाटर :–पर्ण कुंचन या मोजेक रोग :– यह विषाणु जनित रोग है। जिसके फलस्वरुप रोग के प्रकोप से पत्ते सिकुड़ कर मुड़ जाते है, छोटे रह जाते है। मोजेक रोग से पत्तियों पर गहरे व हल्के पीलेपन लिये हुए धब्बे बन जाते है। रोग का प्रसारण सफेद मक्खी कीट द्वारा होता है। **रोकथाम** :–रोग को फैलाने से रोकने हेतु डाइमिथोएट 30 ई.सी. 1 मि.ली. प्रति लीटर पानी के हिसाब से छिड़काव करें। नर्सरी तैयार करते समय बवाई से पूर्व कार्बोफ्यूरान 3 जी 8–10 ग्राम प्रति वर्ग मीटर के हिसाब से भूमि में मिलावे। फूल आने पर डाईमिथोएट के स्थान पर मैलाथियॉन 50 ई. सी. 1 मि.ली. प्रति लीटर पानी के हिसाब से छिड़काव करे।

कुष्माण्ड कुल की सब्जियॉ : कद्दू, लौकी, तोरई व करेला प्रमुख है। **रोग व रोकथाम** :– तुलासिता रोग :– जो कि स्यूडोपेरोनोस्पोरा क्यूबेन्सीस नामक फफूंद द्वारा फैलता है। **रोकथाम** :– मैन्कोजेब 2 ग्राम/लीटर पानी के हिसाब से लक्षण दिखने पर छिड़काव करें।

झूलसा रोग :– जो कि अल्टरनेरिया कूकूमेरिना नामक फफूंद द्वारा फैलता है। **रोकथाम** :– जाइनेब 2 ग्राम/लीटर पानी के हिसाब से छिड़काव करें।

छाछिया रोग :– जो कि इरीसाइफी साइकोरेसिएरम नामक फफूंद द्वारा होता है। लक्षण दिखते ही केराथियॉन एल.सी. नामक दवा का 1 मि.ली./लीटर पानी के घोल का छिड़काव करें। **विषाणु रोग या मोजेक रोग** :– यह सी. एम.वी. विषाणु द्वारा फैलता है। एफिड वं सफेद मक्खी रोग का प्रसारण कार्य करती हैं। **रोकथाम** :– मेलाथियॉन नामक कीटनाशक का छिड़काव करें। ध्यान रहे की कीटनाशक के छिड़काव करने के पश्चात् 15 दिनों तक फलों को खाने के काम ना लेवें।

नीबू :– **कैंकर रोग**– जो कि जैन्थोमोनास नामक जीवाणु द्वारा फैलता है। इस रोग से पत्तियों, टहनियों व फलों पर भूरे रंग के मध्य खुरदरे व कार्कनुमा धब्बे बनते है। **रोकथाम** :– रोपण से पूर्व कॉपर आक्सीक्लोराइड का 0.3 प्रतिशत घोल का छिड़काव करें। लक्षण दिखने पर स्ट्रेप्टोसाइक्लिन 250 मि.ली. ग्राम एवं कॉपर आक्सीक्लोराइड का 3 ग्राम प्रति लीटर पानी में घोल बनाकर 20 दिन के अन्तराल पर छिड़काव करें।

उद्यानिकी कार्यक्रम :

फलोद्यान : इस क्षेत्र में बेर में फूल आने व फल बनने का समय है अतः बेर में भारी सिंचाई न करे तथा कीटनाशी दवाइयों का प्रयोग मटर आकार के फल बनने के बाद ही करें। अनार में नियमित सिंचाई करें ताकि फल न फटे। पौधों की निराई–गुड़ाई का विशेष ध्यान रखें। नींबू वर्गीय वृक्षों में पादप संरक्षण का कार्य करें तथा फलों को गिरने से बचाने के लिये प्लेनोफिक्स 1 मि.ली. को 5 लीटर पानी में मिलाकर पौधों पर छिड़काव करें।

सब्जियॉ:–

बैंगन की खेती के लिये बसंत काल में ली जाने वाली फसल की रोपाई करें। जिसमें पंक्ति से पंक्ति व पौधे से पौधे की दूरी 60x60 से.मी. रखें। सर्दी की फसल में उपयुक्त सिंचाई, निराई, गुड़ाई व पादप संरक्षण का ध्यान रखें।

मिर्च में सिंचाई, निराई–गुड़ाई व पौध संरक्षण पर विशेष ध्यान रखें। फुलों के झड़ने की स्थिति में प्लेनोफिक्स 1 मि. ली. प्रति 5 लीटर पानी में मिलाकर छिड़काव करें।

मूली की बुआई के लिए पूसा रश्मी या जापनीज व्हाइट

किस्म का उपयोग करें। मूली की बुआई मेड़ो पर करनी चाहिये। मेड़ से मेड़ की दूरी 30–40 से.मी. तथा पौधे से पौधे की दूरी 8–10 से.मी. रखनी चाहिये। आवश्यकतानुसार सिंचाई करें।

धनियां की बुवाई का उपयुक्त समय 25 अक्टूबर से 15 नवम्बर है। खेत की तैयारी के समय 150 से 200 क्विंटल गोबर खाद, 60 किलोग्राम नत्रजन, 30 किलोग्राम फॉस्फोरस तथा 20 किलोग्राम पोटाश प्रति हैक्टेयर की दर से प्रयोग करें। नत्रजन की 1/3 मात्रा तथा फॉस्फोरस व पोटाश की पूरी मात्रा बुवाई से पूर्व प्रयोग करें। उत्तम किस्म आर.सी.आर.–41, है। बीज की 15–20 किलोग्राम मात्रा एक हैक्टेयर के लिये पर्याप्त है। 2 ग्राम एग्रोसन जी.एन. या थाईरम 3 ग्राम प्रति किलोग्राम बीज की दर से उपचारित करें। बीज को बुवाई से पूर्व दो हिस्सो में विभाजित कर लेवें। पंक्ति से पंक्ति की दूरी 40 से.मी. रखे तथा बीज को 3–4 से.मी. गहरा बोयें।

पत्तीदार सब्जियों में पालक व मैथी की बवाई करें। मैथी की किस्म आर.एम.टी.–1 व कसूरी मैथी तथा पालक की जोबनेर ग्रीन किस्म का उपयोग करें। मैथी की बीज दर 20–25 व पालक की 25–30 तथा कसूरी मैथी 10–15 किलोग्राम/हैक्टेयर है। पंक्ति से पंक्ति की दूरी 20 से.मी. तथा गहराई 4–5 से.मी. पर बोये।

लहसून की 5 किलोग्राम कलियॉ प्रति हैक्टेयर की दर से बोये। 200–500 क्विंटल गोबर खाद तथा 60 किलोग्राम नत्रजन, 40 किलोग्राम फॉस्फोरस तथा 100 किलोग्राम पोटाश खेत की तैयारी के समय बुवाई से पूर्व मिलायें। पंक्ति से पंक्ति 15 से.मी. व पौधे से पौधे की दूरी 7 से.मी. रखें। लाड़वा व मलेवा किस्मों को प्रयोग में लाये।

लेखक अपने आलेख

dee@raubikaner.org /

rajeshvermasct@gmail.com

पर हिन्दी फोन्ट कृतिदेव 10 में वर्ड फाईल व पीडीएफ दोनों में भिजवाने का श्रम करें।

Printed and published by Dr. Neena Sareen on behalf of Nidesak Prasar Shiksha and Printed at M/s Kishan Enterprises, Magaram Colony, Outside Jassusar Gate, Bikaner and published at Swami Keshwanand Rajasthan Agricultural University, Bikaner, Editor : Prof. Rajesh Kumar Verma.